प्रकृति का मन ही वसंत का गान

-डॉ किरण तिवारी

प्रकृति तो सदा ही दीप्तिमान् और शुद्ध होती है और अपने अंश द्वारा मनुष्य के जीवन को मधुर बनाती रही है लेकिन मनुष्य ने महाअज्ञान के कारण अपनी विलासिता के ऐसे सीमान्त क्षेत्रों का निर्माण किया जिसमें उसकी विलासितापूर्ण जीवन पांच तत्वों में अशुद्धि के साथ अपने अन्तिम अवस्था में है।

जीवन के राग को गाता मनुष्य कब गलत स्वर अलापने लगा इसका पता उसे तब तक नही चला जब तक धरती की चीख निकल नही गई, एक अनिच्छुक चुप्पी के साथ धरती जैसे मरी हुई आत्मा का घर हो गई हो। बेसुध पृथ्वी की मौन छाती पर प्रदूषण सांप बन आ बैठा और हम अनदेखी कर लालच भरी कामना के साथ विलासिता को गले लगाए रहे। ऐसा क्यों हुआ? भारतीय दृष्टि चिरकाल से सम्पूर्ण प्राणियों एवं वनस्पतियों के कल्याण की आकांक्षा रखती आई है। मानव जीवन तथा प्राकृतिक जीवन मे अनुस्यूत एकता का वर्णन वेदों में जगह-जगह दृष्टिगोचर होते हैं।

ऋषि जल की महिमा का गान करते हैं वो शुद्ध वायु को प्राणी के लिए औषधि बताते हैं तरु कहकर वृक्ष को तराने वाला बताते हैं। वे वृक्ष, पौधे, पहाड़, जल को सत्पुरुष, की तरह महान बात कर उनके संरक्षण करने की बात करता है।

छायामन्यस्य कुर्वन्ति तिष्ठन्ति स्वयमातपे।
फलान्यपि परार्थाय वृक्षाः सत्पुषा ईव॥

वैदिक ऋषि प्रकृति से उतना ही ग्रहण करने की बात करता है, जितना मनुष्य के लिए आवश्यक हो।

यत्ते भूमे विखनामि क्षिप्रं तदपि रोहतु।
मां ते मर्म विमृग्वरी या ते हृदयमर्पितम् ?॥

अतः स्पष्ट है कि यजुर्वेद का ऋषि सर्वत्र शान्ति की प्रार्थना करते हुए मानव जीवन तथा प्राकृतिक जीवन में अनुस्यूत एकता का दर्शन बहुत पहले कर चुका था। ऋग्वेद का नदी सूक्त एवं पृथ्वी सूक्त तथा अथर्ववेद का अरण्यानी सूक्त क्रमशः नदियों, पृथ्वी एवं वनस्पतियों के संरक्षण एवं संवर्धन की कामना का संदेश देते हैं।

वैदिक ऋषियों ने उन समस्त उपकारक तत्वों को देव कहकर उनके महत्व को प्रतिपादित तो किया ही है, साथ ही मनुष्य के जीवन में उनके पर्यावरणीय महत्व को भी भली-भांति स्वीकार किया है।

वेदों में पर्यावरण को अनेक तरह से बताया गया है, जैसे- जल, वायु, ध्वनि, वर्षा, खाद्य, मिट्टी, वनस्पति, वनसंपदा, पशु-पक्षी आदि। जीवित प्राणी के लिए वायु अत्यंत आवश्यक है। प्राणी जगत के लिए संपूर्ण पृथ्वी के चारों ओर वायु का सागर फैला हुआ है। इस प्रकार मत्स्य पुराण, विष्णुस्मृति, ब्रह्मवैवर्त-पुराण, अग्निपुराण, वाराहपुराण, भविष्यपुराण, भविष्योत्तर पुराण, स्कन्दपुराण, पद्मपुराण, वामनपुराण, तथा अन्यान्य पुराणों के साथ श्रीमद्भागवद् महापुराण में पर्यावरण संरक्षण से संबंधित अन्यान्य मार्गों का धार्मिक निर्देश किया गया है।

तमाम ऐसे देवताओं के बारे में हमारे ऋषियों ने अपने पुराणों में बताया है जो किसी न किसी रूप से जल, जमीन एवं जड़ी बूटियों से जुड़े हैं। मार्कंडेय पुराण के एक प्रसिद्ध खंड में शाकम्भरी देवी घोषणा करती हुई कहती है कि मैं जीवनपोषक साग सब्जियों के साथ विश्व का पोषण करूंगी। ऐसे ही जीव, जल के संरक्षक शिव भी हमें नजर आते हैं। उनके मूल में प्रकृति और पर्यावरण ऐसे जुड़े जैसे शब्दों से अर्थ। जड़ चेतन, जीव-जगत, प्रकृति की रक्षा के लिए हलाहल विष पीने वाले शंकर नीलकंठ होकर हमें याद दिलाते हैं कि सभी ऐसी अप्राकृतिक वस्तुओं को हमे पृथ्वी से अवशोषित करना है।

हमारे जितने भी पुराण या धार्मिक ग्रंथ हैं, उसमें कहीं न कहीं पर्यावरण को बचाने, प्रकृति निर्मित हर वो चीज जो मनुष्य के जीवन को बेहतरीन बनाती हैं के बारे में विस्तार से बताया गया है। प्रकृति के साथ बेहतर रिश्ते हो इसके लिए यहां तक प्रयास हमारे पूर्वजों ने किया है कि नदी में स्नान करने के नियम, जल सरक्षण के उपाय भी बताए हैं। श्रीमद भागवत में महाराज पृथु और पृथ्वी देवी के बीच इस तरह का विस्तार से एक